गुरू जम्भेश्वर का कर्म योग सिद्धान्त

-डॉ. नरेश कुमार सिहाग

सारांश:-

भारतीय धर्म साधना में परमार्थ लाभ के लिए ज्ञान, योग और भक्ति तीन मार्ग बतलाए हैं। ये तीनों ही मार्ग अपने-अपने स्थान पर अपने आप में श्रेष्ठ हैं। वैदिक धर्म में कर्मसिद्धान्त को 'ऋत' कहा गया है। जिसका अर्थ होता है 'जगत की व्यवस्था'। इस व्यवस्था में नैतिक व्यवस्था भी समाविष्ट है। यह ऋत का विचार उपनिषद् दर्शन में कर्मवाद का रूप ले लेता है। न्याय वैशेषिक दर्शन में कर्म सिद्धान्त को अदृष्ट कहा जाता है। क्योंकि यह दृष्टिगोचर नहीं होता। विश्व की समस्त वस्तुएं यहां तक कि परमाणु भी इस नियम से प्रभावित होते हैं। मीमांसा दर्शन में कर्म सिद्धान्त को अपूर्व कहा जाता है। न्याय दर्शन व वैशेषिक दर्शन में अदृष्ट का संचालन ईश्वर के अधीन है। परन्तु मीमांसा दर्शन मानता है कि कर्म सिद्धान्त स्वचालित है। कर्म किसी उद्देश्य की भावना से किये जाते हैं। निष्काम कर्म, कर्म सिद्धान्त से स्वतंत्र है। वैसे तो कर्म शब्द का प्रयोग दो अर्थों में होता है। साधारणतः कर्म शब्द का प्रयोग कर्म सिद्धान्त के रूप में होता है। हिन्दु धर्म में वर्णित कर्म सिद्धान्त को जैन बौद्धों में भी मान्यता मिली है। जहाँ तक कर्म सिद्धान्त का सम्बन्ध है जिनका बौद्ध धर्म, जैन धर्म, ईसाई धर्म और इस्लाम धर्म में भी कर्म सिद्धान्त पर बल दिया गया।

मुख्य बिन्दु: कर्म, योग, गीता, सिद्धांत, धर्म, गुरू, दर्शन।

हिन्दु धर्म में बन्धन से मुक्ति पाने के लिए कर्म पर जोर दिया गया है। कर्म योग, राजयोग और ज्ञान योग की तरह मुक्ति का एक मार्ग है। हिन्दु धर्म के प्रधान ग्रंथ भगवत्गीता में मानव को निरन्तर कर्म करने की प्रेरणा व अपने कर्तव्य पथ पर जागरूक रहने की शिक्षा देता है। गीता में भगवान श्रीकृष्ण निरन्तर कर्म करने का आदेश देते हैं। अचेतन वस्तु को भी कार्य करने की प्रेरणा देते हैं। अतः कर्म से विमुख होना महान् मूर्खता है। व्यक्ति को प्रत्येक क्षण कर्म करते रहना चाहिए। जो व्यक्ति निष्काम कर्म करता है उसका मन पवित्र हो जाता है। कर्मयोग आत्मशुद्धि के द्वारा मानव को मोक्ष प्रदान करता है। यद्यपि कर्मयोग मोक्ष प्राप्त करने का एक मार्ग है फिर भी यह सरल मार्ग नहीं है। इसके विपरित यह मार्ग अत्यधिक कठिन है। निष्काम का आदर्श कामनाओं का विनाश माना जाता है।

हमारी धर्म-दर्शन परम्परा में कर्म को जो महत्व दिया गया है उसी के आधार पर गुरू जम्भेश्वर ने कर्म सिद्धान्त की परम्परा को आगे बढ़ाया है। उनका विचार है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्म की परम्परा को आगे बढ़ाया है। उनका विचार है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्म का स्वयं उत्तरदायी है। जैसा कर्म करेगा उसे वैसा ही फल प्राप्त होगा। इसलिए प्रतिक्षण मनुष्य को शुभ कर्म करते रहना चाहिए। कर्मों को निष्काम भाव से करना ही प्रत्येक

मनुष्य का कर्त्तव्य है। गुरू जम्भेश्वर ने अपनी वाणी द्वारा यह बतलाने का प्रयास किया है कि मनुष्य स्वयं अनैतिक कार्यों को करके उसका दोष भगवान को देता है परन्तु मनुष्य को यह समझ लेना चाहिए। इस कार्य के लिए वह स्वयं दोषी है।

''विसन नै दोस किसी रे प्राणी
तेरी करणी का उपगारूं।''[1]

अभिप्रायः यह है कि मनुष्य की करणी के अनुसार फल प्राप्ति होगी। इसमें विष्णु का कोई दोष नहीं है। जैसी खेती की जायेगी वैसी ही फसल प्राप्त होगी।

''भोम भली किरसांण भी भलो,
वूठो है जे वाहिये।
करसंण कियो त ने ही खेती,
तिसिया साखि निमाइयै।।[2]

गुरू जम्भवेश्वर ने कर्मों की उपयोगिता बताते हुए कहते हैं कि प्रकृति के द्वारा वर्षा होती है जमीन, खाद, बीज के अनुसार ही फसल पैदा होती है। इसमें पानी, खाद और जमीन तथा इसके उपरांत किसान की कड़ी मेहनत ही काम आयेगी तभी अच्छी फसल की आशा रखनी चाहिये। इस प्रकृतिगत उदाहरण द्वारा उन्होंने श्रेष्ठ कर्मों को करने की प्रेरणा मानव समाज को दी है। गुरू जम्भेश्वर जी कर्मों की बहुउपयोगिता बतलाते हुए कहते हैं कि उत्तम और श्रेष्ठ जीवन पूर्व कर्मों के अनुसार ही प्राप्त होता है। ईश्वर अहर्निश जीवन प्रक्रिया में कोई अवरूद्ध उत्पन्न नहीं करता है। इस जीवन में आप श्रेष्ठ कार्य करोगे तो अनागत जीवन में वे ही काम आयेंगे। कर्मों के अनुसार ही जीव अच्छे एवं बुरे होते हैं। व्यक्ति कर्मों के अनुसार ही उत्तम और मध्यम होता है न कि कुल और आये से। जैसे जम्भवाणी में आया है कि:

''घणां दिना का बड़ा न कहिया बड़ा न लंघिबा पारूं।
उतिम कुली का उतिम न कहिबा कारण किरिया सारूं।।''[3]

मनुष्य सुकृत कार्यों के कारण ही महान् बनता है। शुभ कार्यों से ही स्वर्ग की प्राप्ति होती है। अकर्मी मनुष्य नरक का अधिकारी होता है। इसलिए मनुष्य शुभ कर्मों को करे और सकारात्मक भावों को अन्तःकरण में धारण करे। ऐसा करके मनुष्य एवं स्वस्थ, सभ्य और सुसंस्कृत समाज का निर्माण कर सकता है। दिग्भ्रांत मनुष्य आवागमन के चक्कर में पड़ा रहता है। वह मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकता। इसलिए गुरू जम्भेश्वर, प्रत्येक मनुष्य को शुभ कर्म करने का उपदेश दिया है। शुभ कर्म करते समय को बाधा उत्पन्न होती है तो किसी भी प्रकार का पश्चाताप् नहीं करना चाहिए। क्योंकि शुभ कर्म अंतिम सत्य तक पहुँचाने वाले होते हैं।

''सुकरत करता हरकति आवै तो ना पछतावो करियौ।''[4]

जीव जब संसार सागर से जाता है तो सत्कर्म ही उसके साथ जाते हैं।

''सुकरत साथिं सखाई चालै।''[5]

शुभ कर्म जीव के साक्षी होते है। यमराज के सामने शुभ और अशुभ कर्मों का लेखा-जोखा होता है। इस लेखे-जोखे का हिसाब प्रत्येक मनुष्य को आगामी जन्म के समय देना पड़ता है।

''भाग परापति करमां रेखा, दरगै जुवंला जुवंला मांघू।''[6]

अकर्म फलीभूत नहीं होते है सुकृत कर्म कभी भी बेकार नहीं जा सकते। सुकृत कर्मों की उपयोगिता लोक और परलोक दोनों में है-

''सुकरत अहल्यौ न जाई।''[7]

ईश्वर कौन से जन्म के शुभ कार्यों का फल किस जन्म में दे-दे यह ईश्वर को ही मालूम है। इसलिए विष्णु का जप करते रहना चाहिए। हाथ से कार्य करते रहो और मूँह से हरि का जप करते रहे। इससे मनुष्य को मुक्ति प्राप्ति होगी। श्वेताश्वरोपनिषद् में कहा है कि गुणों से युक्त कोई भी प्राणी फल की कामना से कर्म करता है तो वह विभिन्न योनियों मे भटकता हुआ अपना जीवन व्यर्थ ही गंवा देता है-

''गुणान्वयो यः फल कर्मकर्त्ता कृतस्य तस्येव स चोपभोक्ता।
स विश्वरूपस्त्रि गुणास्त्रिवर्त्मा प्राणाधिपः संचरित स्वकर्मभिः।।''[8]

इसका अभिप्राय यह है कि शुभ कर्म प्रयोजन सिद्धि युक्त होना चाहिये। कार्य से सिद्धि प्राप्त करना ही सुकृत कर्म है। भारतीय वाङ्गमय में कर्मानुसार फल प्राप्ति सबसे महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। मनुष्य में अकरणीय कर्म न करके शुभ कर्म करें ताकि समाज व राष्ट्र के लिए उपयोगी और सार्थक हो। शुभ कर्म मानव जीवन का प्राण आधार है। क्योंकि प्राणों के साथ केवल शुभ कर्म ही जायेंगे। गुरूग्रंथ साहिब में सत्कर्म करने की प्रेरणा दी गयी है।

''सो निहकरमी जो सबद बीचारे।
अंतर ततु गिआन हउसै मारे।।
हउमै करै निहकरमी न होवै।
गुर परसादी हउमै खोवै।।
अंतर विवेक सदा आप बीचारे।
गुरू सबदी गुण गावणिआ।।''[9]

माया अर्थात् वंचना, ठगवृति से किये गये कर्म बंधनकारी होते हैं। अविद्या और माया द्वारा उत्पन्न कर्म मन की कामनाओं को तृष्णा से परिवर्तित करते हैं और फिर कर्मानुकूल फलोपलब्धि भोग का रूप धारण कर लेती है। गीता के निष्काम कर्म की महत्ता को प्रतिपादित करते हुए कहा है कि:

''तस्मादसक्तः सततं कार्य कर्म समाचार।

असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पुरूष।।''[10]

इस प्रकार प्रत्येक धर्म एवं दर्शन में देखा जाए तो पाते हैं कि सभी धर्मों में जीव को अनासक्त होकर प्रतिदिन शुभ कर्म करने की प्रेरणा दी गई है। अतएव मनुष्य को चाहिये कि वह अनासक्त और निष्काम कार्य करते हुए ही परमतत्त्व की प्राप्ति करे। प्रत्येक मनुष्य का मन सांसारिक कार्यों में बंधा हुआ रहता है चंचल और अस्थिर मन कर्मों में संलिप्त रहते हैं। स्थिति प्रज्ञ मनुष्य मन पर नियंत्रण रखता है। मन को नियंत्रण में रखना काफी कठिन है। क्योंकि यह मन चंचल और अस्थिर कर्मों में संलिप्त रहता है उसको पलभर के लिए नियंत्रण में रखना अति कठिन है। आत्मसंयम के द्वारा उस पर विजय प्राप्त की जा सकती है। विष्णु नाम स्मरण के द्वारा अनेक प्रकार के विकारों एवं अवगुणों से छुटकारा पाया जाता है। विष्णु के नाम स्मरण में अनन्त गुण हैं।

''विसन विसन तूं भणरे प्राणी।
विसन भणता अनंत गुणूं।।''[11]

गुरू जम्भेश्वर जी कहते हैं कि विष्णु की व्यापकता, सार्वभौमिकता, सर्वत्र और सार्वजनीन है निर्गुण विष्णु सृष्टि के कण-कण में व्याप्त है। वह अनंत, अगम्य, असीम, अजन्मा, निरंजन और निराकार के रूप में सर्वत्र व्याप्त है। सद्गुरू की अनुकंपा से ही विष्णु नाम स्मरण का सुअवसर प्राप्त होता है।

विष्णु जप ही कर्म-बंधन से मुक्त कराने वाला है। गुरू जम्भेश्वर ने यह बतलाया है विष्णुमय प्रकृति द्वारा सभी पाप बंधनों को तोड़ा जा सकता है। अतः जम्भवाणी में गुरू जम्भेश्वर ने मानव मंगल को दृष्टि में केन्द्रित कर ही कर्म-सिद्धांत का प्रतिपादन किया है। इसलिए मनुष्य को अशुभकर्म छोड़कर शुभकर्म करने चाहिये। इस प्रकार गुरू जम्भेश्वर का कर्म सिद्धान्त मानव कल्याण में गहरी आस्था रखता है। उनका कर्म सिद्धान्त मुक्तिदाता है। इसलिए उनका कर्म स्वायन्त सुखाय है, प्रयोजन हेतु सत्वं, शिवं और सुन्दरम् की नीति-नियमों पर आधारित है। जो मानव के कल्याण के साथ-साथ यश, अर्थ, काम और मोक्ष की प्रेरणा देने वाला है। गुरू जम्भेश्वर का कर्म सिद्धान्त मानव जीवन को लोकमंगल की भावना के लिए एक महत्वपूर्ण आदर्श है जिस पर चलकर मनुष्य अपना जीवन सार्थक और उपयोगी बना सकता है और जन्म मरण के बन्धन से मुक्ति प्राप्त कर सकता है।

संदर्भ:

1. जाम्भोजी, बिश्नोई सम्प्रदाय और साहित्य, डॉ. हीरालाल माहेश्वरी, पृ. 317
2. जाम्भोजी, विष्णोई सम्प्रदाय और साहित्य, डॉ. डॉ. हीरालाल माहेश्वरी, पृ. 336
3. वहीं, पृ. 328
4. जम्भवाणी मूल संजीवनी व्याख्या- डॉ. किश्नाराम बिश्नोई, पृ. 146
5. वहीं, पृ. 119
6. वहीं, पृ. 327
7. जम्भवाणी मूल संजीवनी व्याख्या- पृ. 363
8. श्वेताश्वतरोपनिषद् 5/7
9. श्री गुरू ग्रंथ साहिब- माझ 5, पृ. 128
10. गीता 3/19
11. सार वचन - स्वामी शिवदयाल सिंह, पद 91
12. संतमत विचार- तिलकराज शंगारी, पृ. 159

-डॉ. नरेश कुमार सिहाग
विभागाध्यक्ष एवं शोध निर्देशक हिन्दी विभाग
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर, राज.
गुगन निवास, 26, पटेल नगर, भिवानी (हरियाणा)
मो. 9466532152